International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2026; 3(4): 101-104
© 2026 IJMH
www.themultijournal.com
Received: 07-07-2026
Accepted: 29-07-2026
Publish : 04-08-2026

अनीता रानी
शोधार्थी,हिन्दी विभाग,
पी. एच डी. रिसर्च सेन्टर - 215,
गुलाम नबी आजाद कला, वाणिज्य व-विज्ञान महाविद्यालय, बार्शीटाकली, जिला -अकोला -444401 (महाराष्ट्र)
सन्त गाडगे बाबा अमरावती विश्व-विद्यालय, अमरावती, महाराष्ट्र

मार्गनिर्देशक -
डॉ. प्रवीण देशमुख
हिंदी विभागाध्यक्ष तथा समन्वयक, अनुसंधान केंद्र,गुलाम नबी आजाद कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय,बार्शी-टाकली,जिला -अकोला -444401
(महाराष्ट्र)

Correspondence:
अनीता रानी
शोधार्थी,हिन्दी विभाग,
पी. एच डी. रिसर्च सेन्टर - 215,
गुलाम नबी आजाद कला, वाणिज्य व-विज्ञान महाविद्यालय, बार्शीटाकली, जिला -अकोला -444401 (महाराष्ट्र)
सन्त गाडगे बाबा अमरावती विश्व-विद्यालय, अमरावती, महाराष्ट्र

`संस्कृति-पथ के पथिक' संस्मरण में ब्रज की संस्कृति- एक अनुशीलन

अनीता रानी, डॉ. प्रवीण देशमुख

शोधसार - खगोलीय और भौगोलिक दृष्टि से ब्रज केवल यमुना के तटों और गोवर्धन की तलहटी तक सीमित भूभाग नहीं है, बल्कि यह सनातन रसभक्ति, वात्सल्य, और माधुर्य का वह चिद्-आकाश है जिसका केंद्र मथुरा वृन्दावन है। **'संस्कृति पथ के पथिक'** के लेखक ने अपनी यात्रा वृत्तान्तात्मक स्मृतियों के माध्यम से यह प्रतिपादित किया है कि ब्रज की संस्कृति मूलतः **'आत्मदान, आत्म-तर्पण, समर्पण और परम स्नेह'** की संस्कृति है।[1] जहाँ अन्य संस्कृतियों में भौतिक उपलब्धियों को प्रधानता दी जाती है, वहीं ब्रज-मनस में 'लीला-पुरुष' श्रीकृष्ण और आत्मीय 'राधा-भाव' को जीवन का चरम लक्ष्य माना गया है। 'संस्कृति पथ के पथिक' संस्मरण के आलोक में ब्रज की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत का अनुशीलन करना मुख्य उद्देश्य है। लेखक ने आधुनिकता और महानगरीय आपाधापी के युग में ब्रजभाषा की अंतर्निहित मधुरता, वहाँ के पारंपरिक त्यौहारों (यथा- लठामार होली), सात्त्विक खान-पान (कचौड़ी-पेड़ा) और यमुना-केन्द्रित लोक-जीवन के जिन अछूते प्रसंगों को उकेरा है। ब्रज केवल एक भौगोलिक क्षेत्र नहीं है, वरन् यह भक्ति, वात्सल्य, और माधुर्य रस का वह लोक-मनस है, जो यमुना की लहरों, गोवर्धन की तलहटी, और मथुरा-वृन्दावन की गलियों में स्पंदित होता है। लेखक ने संस्मरण की विधा के माध्यम से ब्रज के इस वैभव को आधुनिक विमर्श के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया है।

भूमिका - भारतीय साहित्य में संस्मरण विधा केवल किसी व्यक्ति विशेष के अतीत की जुगाली नहीं है, अपितु यह राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय संस्कृति के जीवन्त और प्रामाणिक दस्तावेज़ीकरण का सशक्त माध्यम है।[2] संस्मरणकार जब अपने जीवन-पथ की स्मृतियों को शब्दबद्ध करता है, तो उसमें तत्कालीन समाज का भूगोल, इतिहास, और लोक आचरण स्वतः समाहित हो जाते हैं।[3] इसी वैचारिक पृष्ठभूमि पर आधारित **प्रो. प्रदीप के. शर्मा** कृत नूतन संस्मरण-ग्रन्थ **'संस्कृति-पथ के पथिक'** भारतीय लोक-जीवन की सांस्कृतिक यात्राओं का एक अनुपम ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ का एक विस्तृत और आत्मीय अध्याय **ब्रज की लोक-संस्कृति** को समर्पित है, जो पाठकों को ब्रज-मण्डल के अनूठे आध्यात्मिक, सामाजिक और व्यावहारिक पक्षों से साक्षात् कराता है।

ब्रज की सांस्कृतिक चेतना और भक्ति दर्शन - 'संस्कृति पथ के पथिक' में ब्रजभूमि को 'समर्पण और स्नेह की भूमि' के रूप में चित्रित किया गया है। लेखक ने संस्मरण के विविध प्रसंगों में स्पष्ट किया है कि ब्रज की संस्कृति मूलतः **'दूध, दही, माखन और मिश्री'** की सात्त्विक लोक-संस्कृति है, जहाँ मांस-मदिरा जैसे तामसिक तत्वों का निषेध है।[4] संस्मरणकार ने अनुभव किया है कि ब्रज की चेतना भारत के अन्य भौगोलिक क्षेत्रों से सर्वथा भिन्न है; यहाँ का जन-जीवन बौद्धिक तर्कों से नहीं, बल्कि आत्मिक भावों और सहज निष्ठा से संचालित होता है। ग्रन्थ में वर्णित ब्रज के भक्ति दर्शन के प्रमुख व्यावहारिक और वैचारिक आयाम निम्नलिखित रूपों में प्रस्फुटित होते हैं-

ईश्वर का मानवीकरण - संस्मरण में लेखक ने मथुरा, वृन्दावन और गोकुल की गलियों का संस्मरण लिखते हुए स्पष्ट किया है कि ब्रज के दर्शन में श्रीकृष्ण कोई दूरी पर बैठे ऐश्वर्यशाली, डराने वाले भगवान नहीं हैं ।[5] वे तो प्रत्येक ब्रजवासी के घर के 'लाला' (बालक) या 'सखा' (मित्र) हैं।

सख्य और वात्सल्य रस - लेखक जब गोवर्धन की तलहटी में चरती गायों और धूल धूसरित बालकों को देखते हैं, तो उन्हें सूरदास के वात्सल्य और रसखान के सख्य-भाव की अनुगूँज सुनाई देती है। ब्रज की सांस्कृतिक चेतना व्यक्ति को सिखाती है कि ईश्वर को पाने के लिए तपस्या की जटाएँ बढ़ाना आवश्यक नहीं, बल्कि उनके प्रेम में डूब जाना ही पर्याप्त है।

राधे-राधे का लोक-मंत्र- संस्मरणकार ने एक अत्यंत आत्मीय प्रसंग में रेखांकित किया है कि ब्रज की गलियों में अभिवादन के लिए 'राम-राम' या 'नमस्ते' के स्थान पर **'राधे-राधे'** का उद्घोष होता है। यह केवल एक सम्बोधन नहीं, बल्कि ब्रज का सर्वोच्च दर्शन है।

ह्लादिनी शक्ति का वैशिष्ट्य - ब्रज दर्शन के अनुसार राधा श्रीकृष्ण की 'ह्लादिनी शक्ति' (आनंददायिनी शक्ति) हैं। लेखक लिखते हैं कि कृष्ण यदि चेतना हैं, तो राधा उस चेतना की गति और रस हैं। ब्रज की नारी-चेतना इसी राधा-भाव से दीप्त है, जहाँ समर्पण कमज़ोरी नहीं, बल्कि सृष्टि की सबसे बड़ी आत्मिक शक्ति बनकर उभरता है।[6]

निषेधपरक शुचिता - 'संस्कृति पथ के पथिक' में ब्रज के खान-पान की सात्त्विकता को वहाँ के दर्शन से जोड़ा गया है। लेखक के अनुसार, ब्रजभूमि का कण-कण 'माखन-मिश्री' जैसी पवित्र लोक-सामग्री से पोषित है, जहाँ तामसिक प्रवृत्तियों और हिंसा का पारंपरिक रूप से निषेध है।

प्रकृति के साथ एकात्मता- ब्रज की भक्ति केवल मन्दिर के गर्भगृह तक सीमित नहीं है। संस्मरणकार ने यमुना के घाटों, करील के कुंजों और कदम्ब के वृक्षों के प्रति ब्रजवासियों के अगाध अनुराग का सजीव वर्णन किया है। ब्रज का दर्शन यह मानता है कि जड़-चेतन, पशु-पक्षी (विशेषतः मोर और गायें) सब उसी एक परब्रह्म के लीला-परिकर के अंग हैं।

लीला-पुरुष कृष्ण का परिवेश- संस्मरणकार ने वृन्दावन के कुंज-निकुंजों और घाटों का वर्णन करते हुए सूरदास, मीरा और रसखान की भक्ति-परम्परा का स्मरण किया है। ब्रज में कृष्ण को 'लीला-पुरुष' के रूप में स्वीकारा गया है, जिसका अर्थ है कि यह समस्त सृष्टि ईश्वर का रंगमंच है।

राधा-भाव और आत्म-तर्पण- संस्मरण में अंकित है कि ब्रज की संस्कृति में कृष्ण से अधिक 'राधा' का नाम पूजनीय है, जो यहाँ की नारी-चेतना, आत्मीयता और परम-समर्पण का प्रतीक है।

ब्रज का लोक-जीवन, तीज-त्यौहार और खान-पान - प्रो. प्रदीप के. शर्मा कृत 'संस्कृति पथ के पथिक' संस्मरण का सर्वाधिक सजीव और कौतूहलपूर्ण पक्ष वह है, जहाँ लेखक ने ब्रज के रोज़मर्रा के **लोक-जीवन, उत्सवधर्मिता और रसात्मक खान-पान** को अपनी स्मृतियों के माध्यम से उकेरा है ।[7] ब्रज का समाज मूलतः एक उत्सवप्रिय समाज है, जहाँ का सामान्य नागरिक भी अपनी आर्थिक चिन्ताओं को भूलकर लोक-रंग में सराबोर रहने की अनूठी कला जानता है। संस्मरण के आधार पर ब्रज के इन व्यावहारिक पक्षों का अनुशीलन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है-

अक्खड़ और आत्मीय स्वभाव - लेखक ने रेखांकित किया है कि ब्रज के लोगों (ब्रजवासियों) के स्वभाव में एक विशेष प्रकार का अल्हड़पन, अक्खड़पन और सहज आत्मीयता होती है। वे किसी बनावटी शिष्टाचार के अभ्यस्त नहीं हैं।

सामूहिकता की भावना- संस्मरणकार जब नन्दगाँव और बरसाने के चौपालों का वर्णन करते हैं, तो वहाँ हुक्के की गुड़गुड़ाहट के बीच समाज के सभी वर्गों का एक साथ बैठना और हँसी-मज़ाक (हास्य-व्यंग्य) करना दिखाई देता है। यह सामूहिकता आधुनिक महानगरीय एकाकीपन पर एक गहरी सांस्कृतिक चोट है।

विश्वप्रसिद्ध लठामार होली 'संस्कृति पथ के पथिक' में बरसाने और नन्दगाँव की **'लठामार होली'**[8] का आँखों देखा, रोमांचक विवरण प्राप्त होता है। लेखक लिखते हैं कि जब गोपियाँ (हुरियारिनें) प्रेम-पूर्वक पुरुषों (हुरियारों) पर लाठियाँ बरसाती हैं और पुरुष ढालों से अपना बचाव करते हैं, तब वह दृश्य केवल एक त्यौहार नहीं रहता, बल्कि स्त्री और पुरुष के बीच के पवित्र साधिकार स्नेह का रंगमंच बन जाता है। लेखक ने 'संस्कृति पथ के पथिक' में ब्रज की विश्वप्रसिद्ध **'लठामार होली'** केवल एक त्यौहार नहीं, बल्कि जाति-पाति के भेदों को मिटाने वाला सांस्कृतिक सेतु है।[9]

होली के रसिया और चरकुला- उत्सव के समय गाए जाने वाले 'रसिया' लोकगीत और सिर पर जलते दीपकों का पिरामिड रखकर किया जाने वाला **'चरकुला नृत्य'** ब्रज की विलक्षण कलात्मक धरोहर हैं, जो इस संस्मरण में अपनी पूर्ण गरिमा के साथ वर्णित हैं।

कचौड़ी, बेढ़ई और मठरी- संस्मरणकार ने मथुरा के विश्राम घाट और वृन्दावन की कुंज-गलियों में मिलने वाले पारंपरिक नाश्ते गरमा-गरम **'बेढ़ई और कचौड़ी'** का रसात्मक वर्णन किया है। यह खान-पान यहाँ के लोक-जीवन के स्वाद और ऊर्जा का मुख्य स्रोत है। ब्रज की दूध-दही आधारित सात्त्विक खान-पान की परम्परा श्रीकृष्ण

के गोपाल-रूप से जुड़ी है । लेखक ने संस्मरण में विशेष रूप से 'मथुरा के पेड़ों' का ज़िक्र करते हुए इसे केवल एक मिठाई नहीं, बल्कि ब्रज के स्नेह और मिठास की सांस्कृतिक सौगात माना है ।

प्रकृति की गोद में वास- ब्रजवासी प्रकृति यथा- यमुना नदी, गोवर्धन पर्वत, और करील के कुंज के साथ एकात्म भाव से रहते हैं । संस्मरण में कचौड़ी, बेढ़ई, और मथुरा के पेड़े जैसे पारंपरिक खान-पान का आत्मीय ज़िक्र है, जो ब्रज के आतिथ्य-संस्कार को दर्शाता है ।[10]

ब्रजभाषा- संवाद और माधुर्य का माध्यम - प्रो. प्रदीप के. शर्मा कृत 'संस्कृति पथ के पथिक' संस्मरण का भाषाई विन्यास यह प्रमाणित करता है कि किसी भी अंचल की संस्कृति को उसकी स्थानीय बोली से अलग करके नहीं समझा जा सकता । लेखक ने रेखांकित किया है कि ब्रज की आत्मा यदि उसके दर्शन में है, तो उसका शरीर और प्राण **ब्रजभाषा** में बसते हैं । ब्रजभाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि वह कानों में मिश्री घोलने वाला माधुर्य का स्रोत है, जो अजनबी को भी पल भर में आत्मीय बना लेता है । संस्मरण में ब्रजभाषा के इस भाषाई वैभव का अनुशीलन निम्नलिखित मुख्य आयामों में किया गया है-

सम्बोधनों का लोक-रस- संस्मरणकार जब मथुरा के पण्डों या बरसाने की गोपियों के साथ हुए संवादों को उद्धृत करते हैं, तो वहाँ **'लाला'**, **'कुँवर जी'** और **'भैया'** जैसे मधुर शब्दों की बहुलता दिखाई देती है ।

अहंकार का विलोपन- लेखक के अनुसार, ब्रजभाषा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें खड़ी बोली जैसी अकड़ या कठोरता नहीं है। इसके क्रियापदों यथा- 'करियो', 'खइयो', 'आइयो' में एक सहज मनुहार और विनय का भाव होता है, जो वक्ता और श्रोता के बीच से दूरी को समाप्त कर देता है ।

मूल भाषा का पुट -लेखक ने अपनी प्रामाणिकता बनाए रखने के लिए स्थानीय लोगों के साथ हुई बातचीत को मूल ब्रजभाषा के पुट के साथ जस का तस प्रस्तुत किया है । उदाहरण के लिए, एक प्रसंग में जब लेखक रास्ता भटक जाते हैं, तो एक वृद्ध गोपी उन्हें तनिक डाँटते हुए कहती है - **अरे लाला! इतौ कहाँ भटक्यौ डोलै है, सीधे गोवर्धन की मारग पकरि ले ।**

मुहावरों की वाक्पटुता- ब्रज के लोगों की वाक्पटुता (हाजिरजवाबी) के अनेक संस्मरण ग्रन्थ में दर्ज हैं। ब्रजवासी गंभीर से गंभीर बात को भी लोक-मुहावरों और विनोदपूर्ण लहजे में कहकर वातावरण को हल्का कर देते हैं ।

काव्यमयी चेतना- लेखक ने स्पष्ट किया है कि ब्रजभाषा केवल अनपढ़ ग्रामीणों की बोली नहीं है, बल्कि यह वह समृद्ध साहित्यिक भाषा है जिसने सदियों तक (रीतिकाल और भक्तिकाल में) पूरे भारत के राजदरबारों और मन्दिरों पर राज किया है । सूरदास और रसखान के पद आज भी ब्रज के घर-घर में प्रभाती और भजनों के रूप में जीवित हैं । संस्मरणकार ने अनुभव किया कि ब्रज का रिक्शेवाला या चायवाला भी बात करते-करते अचानक किसी रसिया या कबीर-सूर के पद की पंक्ति गुनगुनाने लगता है, जो उनकी उच्च सांस्कृतिक अभिरुचि को दर्शाता है ।[11]

संस्मरणकार ने रेखांकित किया है कि ब्रज की संस्कृति को जीवन्त रखने में वहाँ की बोली 'ब्रजभाषा' का सर्वाधिक योगदान है ।[12] ब्रजभाषा की अंतर्निहित मिठास और उसमें प्रयुक्त होने वाले आत्मीय सम्बोधन (यथा- 'लाला', 'लली', 'भैया') बाहरी व्यक्ति को भी तत्काल अपना बना लेते हैं। संस्मरण में लेखक ने स्थानीय लोगों के साथ हुए संवादों को मूल ब्रजभाषा के पुट के साथ उद्धृत किया है, जिससे लेख की प्रामाणिकता और अधिक बढ़ जाती है।

भावी अनुसन्धानीय दृष्टि - अन्ततः, 'संस्कृति पथ के पथिक' संस्मरण सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और लोक-संस्कृति के अध्येताओं के लिए एक महती प्राथमिक स्रोत की भाँति मार्ग प्रशस्त करता है। आने वाले समय में इस ग्रन्थ में वर्णित अन्य अंचलों की लोक-संस्कृतियों का भी इसी प्रकार गवेषणात्मक अनुशीलन किया जाना अनिवार्य है, ताकि यायावरी और संस्मरण साहित्य के माध्यम से भारत की सामासिक संस्कृति के नए आयाम उद्घाटित हो सकें। इस संस्मरण में ब्रज के जिन लुप्तप्राय कुंज-गलियों, घाटों, और पारंपरिक लोक-कलाओं (यथा- चरकुला, रसिया गायन) का वर्णन है, उन्हें प्राथमिक स्रोत मानकर **'सांस्कृतिक मानचित्रण'** किया जा सकता है । शोधार्थी जी.आई.एस. (GIS) तकनीक के माध्यम से संस्मरणकार के यात्रा-वृत्त का एक डिजिटल एटलस तैयार कर ब्रज की धरोहरों का प्रलेखन कर सकते हैं। 'संस्कृति पथ के पथिक' में स्थानीय लोगों के साथ जो जीवन्त ब्रजभाषा संवाद उद्धृत हैं, वे भाषा-वैज्ञानिकों को एक नया मार्ग दिखाते हैं । आधुनिकता के प्रभाव में आ रही नई पीढ़ी द्वारा ब्रजभाषा के क्रियापदों और आत्मीय सम्बोधनों को छोड़कर महानगरीय मिश्रित भाषा अपनाने के प्रतिरूपों का एक तुलनात्मक और सांख्यिकीय अध्ययन किया जा सकता है।

संस्मरणकार ने बरसाने की लठामार होली और वृन्दावन के आतिथ्य-संस्कार का जो विवरण दिया है, वह खगोल-पर्यटन और धार्मिक-पर्यटन के समाजशास्त्र के लिए महती सामग्री देता है ।[13] अनुसंधानकर्ता इस बात पर शोध कर सकते हैं कि वैश्विक पर्यटन के व्यावसायीकरण के बीच ब्रज की उस 'सात्त्विक मूल चेतना' को कैसे बचाया जाए जिसका लेखक ने बार-बार आह्वान किया है ।

उपसंहार - प्रो. प्रदीप के. शर्मा कृत 'संस्कृति पथ के पथिक' संस्मरण के विविध अध्यायों में वर्णित ब्रज-मण्डल के सांस्कृतिक प्रसंगों का गहन अनुशीलन करने के उपरान्त यह अकाट्य रूप से सिद्ध होता है

कि यह ग्रन्थ मात्र वैयक्तिक स्मृतियों का लेखा-जोखा नहीं है, वरन् ब्रज की जीवन्त लोक-संस्कृति का एक अत्यंत प्रामाणिक और वैचारिक दस्तावेज़ है। संस्मरणकार ने आधुनिकता, नगरीकरण और पश्चिमीकरण की तीव्र बयार के बीच ब्रज की उस अमूर्त सांस्कृतिक विरासत को सहेजने का श्लाघनीय प्रयास किया है, जो लोक-हृदय में 'राधे-राधे' के लोक-मंत्र और सात्त्विक जीवन-मूल्यों के रूप में स्पंदित है । बरसाने की लठामार होली, चरकुला नृत्य और रसिया लोकगीतों का आत्मीय चित्रण यह रेखांकित करता है कि ब्रज की उत्सवधर्मिता सामाजिक समरसता और स्त्री-पुरुष के मध्य साधिकार आदर का एक अनूठा सांस्कृतिक सेतु है । ब्रजभाषा के संवादों को मूल पुट के साथ प्रस्तुत कर लेखक ने सिद्ध किया है कि ब्रज की भाषा अपनी अंतर्निहित मिठास, विनय और अहंकार-शून्यता के कारण आज के तनावग्रस्त और एकाकी समाज को परस्पर जोड़ने में पूरी तरह सक्षम है । मथुरा के पेड़ों, बेढ़ई और कचौड़ी जैसे पारंपरिक व्यंजनों के माध्यम से ब्रज के आतिथ्य-संस्कार और सात्त्विक खान-पान की जिस छवि को संस्मरण में उकेरा गया है, वह ब्रज-संस्कृति के व्यावहारिक सौंदर्य को प्रदीप्त करती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. शर्मा, प्रो. प्रदीप के., संस्कृति पथ के पथिक, विकास बुक कम्पनी, नई दिल्ली, पृष्ठ – 151-184
2. वर्मा, महादेवी, पथ के साथी, रूपरेखा विमर्श, हिन्दवी बुक्स लाइब्रेरी, पृष्ठ - 44
3. डॉ. सिंह, रामप्रसाद, ब्रज लोक संस्कृति, हिंदी जर्नल ऑफ रिसर्च, पृष्ठ – 26-27
4. दुबे, श्रीधर, ब्रज की संस्कृति (निबंध), हिंदी समय ग्रन्थ संकलन, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, पृष्ठ - 55
5. वर्मा, महादेवी, अतीत के चलचित्र और स्मृति की रेखाएँ, डिजिटल लाइब्रेरी ऑफ इंडिया, आर्काइव संस्करण, पृष्ठ – 135-175

सन्दर्भ

1. संस्कृति-पथ के पथिक, ब्रजयात्रा के सोपान, पृष्ठ - 157-159
2. पथ के साथी, संस्मरण समीक्षा प्रभाग, पृष्ठ - 44
3. अतीत के चलचित्र और स्मृति की रेखाएँ, पृष्ठ - 135
4. ब्रज लोक संस्कृति, पृ. 26
5. संस्कृति-पथ के पथिक, ब्रजयात्रा के सोपान, पृष्ठ - 161
6. ब्रज लोक संस्कृति, पृ. 27
7. संस्कृति-पथ के पथिक, ब्रजयात्रा के सोपान, पृष्ठ – 170-172
8. संस्कृति-पथ के पथिक, ब्रजयात्रा के सोपान, पृष्ठ - 175
9. ब्रज लोक संस्कृति, पृ. 27
10. ब्रज की संस्कृति (निबंध), पृष्ठ – 55
11. अतीत के चलचित्र और स्मृति की रेखाएँ, पृष्ठ – 125
12. संस्कृति-पथ के पथिक, ब्रजयात्रा के सोपान, पृष्ठ – 178-181
13. संस्कृति-पथ के पथिक, ब्रजयात्रा के सोपान, पृष्ठ - 184